''पर्यटन के क्षेत्र में पुरातत्व का योगदान''(उत्तराखण्ड के विषेश संदर्भ में)

अभिनव तिवारी
शोध छात्र, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, हे0न0ब0 गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल)
''प्रो0 आर0सी0 भट्ट
प्रोफेसर, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, हे0न0ब0 गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर

विश्व के किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक चेतना के आदान–प्रदान के कारण पर्यटन, सम्पूर्ण राष्ट्र (देश) को एवं विश्व को एक सूत्र में बांधने का काम करता है, जो मुख्य साधन भी है तथा पर्यटन विश्व बन्धुत्व का पाठ सिखाता है। अनादिकाल से ही भारत अपनी ऐतिहासिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, प्राकृतिक,नैसर्गिक विशिष्टता के कारण पर्यटकों के आकर्षक का केन्द्र बिन्दु रहा है।

भारत के पूर्व में जगन्नाथ धाम पूरी पश्चिम में द्वारका पुरी, दक्षिण में रामेश्वरम् और उत्तर में महान हिमालय और उसकी अन्य श्रृंखलनाएं तथा उन्हीं हिमालय पर स्थित राज्य उत्तराखण्ड, तमाम हिन्दु वैदिक धार्मिक स्थल एवं पुरातात्विक स्थल भी विद्यमान है। जो किसी ना किसी तरह सम्पूर्ण भारत को धार्मिक एकता को प्रदर्शित करते हुये धार्मिक पर्यटन, ऐतिहासिक पर्यटन, आध्यात्मिक पर्यटन, शैक्षिक पर्यटन एवं मनोरंजन पर्यटन के लिए पर्यटकों को आकर्षित करता रहा है और करता भी है।

भारतवर्ष में उत्तराखण्ड का अपना एक विशिष्ट स्थान है। किसी भी पर्यटन को यहाँ के निर्मल नदियाँ, किलकिलाते झरने, पहाड़ों से लेकर गगन चुम्बी बर्फ से आच्छादित चोटियां इत्यादि सुन्दर दृश्यों को पर्यटक की आंखें और दिल दोनों ठिठक जाते हैं और बरबस आकर्षित हो जाते है।

भारत के मध्य हिमालय में अवस्थित उत्तराखण्ड का भू–भाग प्राचीन काल से ही अपने प्राकृतिक और आध्यात्मिक वैभव के लिए प्रसिद्ध है। इसी वैभव से आकर्षित होकर युग–युग से देश के विभिन्न भागों से प्रकृति प्रेमियों, ईश्वर भक्तों और त्यागी–तपस्वी मानवों ने इस रम्य किन्तु दुष्कर वन प्रान्त में आकर उसका निवास प्रारम्भ किया। गंगा–यमुना को उद्भव

की जन्म स्थली तथा तीनों की यह पत्रिका नगरी, धार्मिक आस्था तथा भारतीय संस्कृति का उद्‌गम पोषक है।पुराणों में भौगोलिक दृष्टि से हिमालय को 5 भागों में विभाजित किया गया है –कश्मीरखण्ड, जलन्धरखण्ड, केदारखण्ड, कुर्मांचलखण्ड और नेपालखण्ड।इन पाँचों खण्डों में से केदारखण्ड मध्यवर्ती है। इसको ही मध्यहिमालय और उत्तराखण्ड कहते है।

मध्य हिमालय में सर्वोत्तम शिखरों से आच्छादित सम्पूर्ण उत्तराखण्ड (कुमाँऊ एवं गढ़वाल) का पर्वत प्रदेश, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक (धार्मिक, प्राकृतिक, अध्यात्मिक, प्राकृतिक) सौन्दर्य की दृष्टि से सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध व अद्वितीय है। आर्य ग्रन्थों में जिस हिमालय को "देवात्मा हिमालय" के नाम से प्रतिष्ठित किया गया है। वह यही उत्तराखण्ड (गढ़वाल एवं कुमाँऊ) के तमाम पवित्र नदियों गंगा–यमुना, सरस्वती इत्यादि का क्षेत्र है। आर्य ऋषियों द्वारा इसी क्षेत्र में स्थित 'गन्धमादन प्रदेश' को स्वर्ग की उपाधि से अंलकृत किया गया है। भारत वर्ष आज भी जिन हिन्दू वैदिक संस्कृतियों का जनमानस को सर्वाधिक प्रभावित की हुई है। यथा – "शैव, वैष्णव एवं शाक्त" यहीं गन्धमादन प्रदेश में फली–फूली थी। केदारनाथ से शिव, बदरीनाथ से विष्णु एवं पार्वती 'शक्ति' धर्म पर्वतकों का यही मध्य हिमालय उत्तराखण्ड प्रकल्पित हुए हैं।

सम्पूर्ण उत्तराखण्ड दो प्रमुख्य मण्डलों में विभाजित है – गढ़वाल एवं कुमाँऊ।

पर्यटक एक सामाजिक, आर्थिक गतिविधि है। जिससे कई क्षेत्रों तथा कभी–कभी पिछड़े इलाकों के आर्थिक विकास, रोजगार और जीवन–यापन के लिए अवसर में विकास मिलता है और इसमें लोगों को देश के अन्य भागों की सभ्यता–संस्कृति और विरासत देखने के अवसर मिलते हैं। पर्यटन ही एक ऐसा कार्य है जिसमें राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने की भी व्यापक क्षमता होती है। पर्यटक आज विश्व का सबसे बड़ा एवं प्रगतिशील व्यवसाय बन गया है। पर्यटन के लिए तभी पर्यटक आकर्षित होंगे और अधिक संख्या में आते है। जब "उस देश में जितने अधिक सुन्दर व आकर्षक प्राकृतिक, रमणीक, ऐतिहासिक तथा धार्मिक स्थल होगें" तो उस देश में पर्यटक व्यवसाय के विकास की गति उतनी ही तीव्रगामी होगा। पर्यटक से आय तो मिलती ही है पर इसमें ज्यादा उसे अपनी प्रसिद्धि एवं आपसी सदभाव और समझबूझ की भी भावना बढ़ती है।

आज तो सम्पूर्ण विश्व को एक–दूसरे के लिए जितनी आवश्यकता सद्‌भाव और आपसी समझ–बूझ की है। उतनी और किसी दूसरे चीज की नहीं है। जब विश्व के सभी देशों के

बीच सद्भाव, आपसी सूझ–बूझ होंगी तभी एक–दूसरे देश में पर्यटन के लिए वहीं के लोगों का आना–जाना होगा।

विदेशी पर्यटक भारत में यहां उद्योग–धंधे और कल कारखाने को देखने नहीं आते और ना ही इससे आकर्षित होते हैं, अपितु वह इस देश की प्राचीन सभ्यता–संस्कृति ही उन्हें बरबस अपनी और आकर्षित करती है और इसी से आकर्षित होकर यहाँ आते है। इन प्राचीन–सभ्यता–संस्कृति में वह पुरातात्विक साक्ष्यों को देखने और जानने के लिए आकर्षित एवं उतावले होते हैं। इन पुरातात्विक साक्ष्यों में वे प्रमुखतः अभिलेख, स्मारक और मुद्रा एवं सामग्रियों को देखने आते है। जो अपने–आपमें हजारों वर्षों का इतिहास छुपाये बैठे है। इस भारत देश में अपार पुरातात्विक सम्पदा, विविध धार्मिक स्थल और पर्वतों से लेकर समुद्र तक प्राकृतिक धरोहर विद्यमान है।

सम्पूर्ण उत्तराखण्ड अधिक सुन्दर व आकर्षित प्राकृतिक,रमणीक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक स्थल है। साथ में यहाँ पर्याप्त पुरातात्विक साक्ष्य भी है जो उत्तराखण्ड में पर्यटन के लिए पुरातत्व बहुत योगदान कर सकता है। जिसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता।

इस प्रकार से साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों से पर्यटन का विकास उत्तराखण्ड में प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक अबाध और अनवरत रूप से चल रहा है।

उत्तराखण्ड में पर्यटन के लिए पुरातत्व का योगदान को हम पुरातात्विक साक्ष्यों के किसी भी रूप से सम्पूर्ण उत्तराखण्ड का पर्यटन प्राचीन युग से लेकर वर्तमान तक और भविष्य में भी उत्तराखण्ड का पर्यटन के लिए पुरातत्व का योगदान कितना महत्वपूर्ण एवं अवर्णनीय है। जिसके योगदान के लिए शब्दों की कमी पड़ जाएगी। फिर भी पुरातात्विक साक्ष्यों को श्रेणीबद्ध किया जा रहा है। जिससे उसके योगदानों के भ्रमण व्याख्यामित किया जा सके।

पुरातात्विक साक्ष्यों को मुख्यतः तीन विधियां ही प्रमुख है। पुरातत्व के विवरण के लिए है।

(1) अभिलेख :–शिलालेख, स्तम्भलेख, गुहालेख, भित्तिलेख, मुद्रालेख, प्रतिमालेख इत्यादि।
(2) कला :– गुहाचित्रकारी, भित्तिचित्रकारी इत्यादि।
(3) स्मारक :– मूर्तियाँ, इमारतें, मंदिरों, महल, किला, खण्डहर, इत्यादि।
(4) मुद्रा :– स्वर्ण, रजत, कांस्य, मृण्य कांच, इत्यादि।
(5) सामग्री :– उपकरण, चूड़ी, मुहरें, भाण्ड, अवशेष, इत्यादि।

किन्तु कुछ शताब्दियों पूर्व से एक और विधि भी जोड़ी जा सकती है। जिसके द्वारा पर्यटन का क्षेत्र काफी विकसित एवं व्यापक हो जाता है। इस विधि के उपयोग से पर्यटक अपने

अलग–अलग दृष्टिकोणों को लेकर पर्यटन करने आते हैं। इससे पर्यटन उद्योग को बहुत लाभ मिलता है साथ में पर्यटक को भी आसानी से अपने पर्यटक के उद्देश्यों को पूरा करने में सुविधा प्राप्त होता है। वह विधि – सामग्री संग्रहण स्थल अर्थात् संग्रहालय (Museum) है। संग्रहालय के उपयोग से तमाम पर्यटकों की आकांक्षायें बदल जाती है एवं पर्यटन उद्योग एवं पर्यटन को तमाम ज्ञान की प्राप्ति एक ही जगह से पूरी हो जाती है। वह अपनी ज्ञान की पिपाशा को यहीं एक ही जगह पर प्राप्त करके सन्तुष्ट हो जाता है। इसलिए संग्रहालय भी किसी देश के किसी क्षेत्र का एक पर्यटन का आकर्षक का केन्द्र बनता है और यह पर्यटन में पुरातत्व के योगदान को स्वतः व्याख्यायित करता है।

उत्तराखण्ड पर्यटन के लिए पुरातत्व का योगदान पुरातात्विक साक्ष्यों में सर्वप्रथम हम अभिलेख एवं कला को दृष्टिगत करते है तो हम देखते है कि सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में प्राचीन समय में कालसी (देहरादून में अशोक के वृहद शिलालेख प्राप्त है।) इसी तरह कठोच द्वारा गोपेश्वर, चमोली का शंख अभिलेख प्रकाि"ात किया गया है।

इसी तरह चित्रकला, शैलाश्रय, संस्कृति के कुछ अवशेष उत्तराखण्ड से भी प्राप्त हुए है। अल्मोड़ा के सुआल नदी के तट पर स्थित 'लखुउड्यार के शैल चित्रों' को जोशी[1] ने सर्वप्रथम प्रकाश लाया। अग्रवाल व जोशी[2] तथा मठपाल[3] द्वारा इन शैल चित्रों का विवरण प्रकाशित किया गया। मठपाल द्वारा अल्मोड़ा के निकट फड़कानौली, पेटशाल, कसादेवी, ल्वेथाप एवं फलसीमा से भी चित्रित शैलाश्रयों की खोज की गई। इसी तरह गढ़वाल के शैलचित्रों के प्रथम साक्ष्य चमोली जनपद के अलकनन्दा घाटी में स्थित डुंगरी ग्राम के निकट स्थान जिसे स्थानीय भाषा में 'ग्वाख्या उड्यार' कहते है, से प्राप्त हुआ है, जिसे सकलानी[4] तथा भट्ट[5,6] द्वारा प्रकाश में लाया गया। भट्ट एवं खंडूरी के अनुसार इन शैलाचित्रों को मध्य पाषाण काल के समझ रखा जा सकता है।

धार्मिक दृष्टिकोण से तो उत्तराखण्ड में अनेक महाकाव्य काल से ही यह क्षेत्र भारतीय संस्कृति में प्रसिद्ध तीर्थ हो गया था। आरण्य पर्व में श्रीकृष्ण का उल्लेख योग–नारायण के रूप में मिलता है जो बदरीकाश्रम में कठिन तप किये थे। यह बद्रीकाश्रम ही वर्तमान का बदरीनाथ है। इस तरह आठवीं शती ई0 में शंकराचार्य इस क्षेत्र में आकर वैदिक धार्मिक स्थलों का पुनरूद्धार किया तथा धार्मिक पुर्नजागरण का सूत्रपात किया। आठवीं शती के लगभग सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में प्रथमतः कत्यूरी एवं तत्पश्चात् चन्द व पाल वंशीय राजाओं का उदय हुआ। शंकाराचार्य की प्रेरणा से और राजाओं के संरक्षण के फलस्वरूप चारों प्रमुख

तीर्थों का विकास हुआ। सातवीं शती से तेरहवीं शती के मध्य सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में कला एवं मन्दिर स्थापत्य के क्षेत्र में मंदिरों और मूर्तियों एवं गढ़ों (किला) के विभिन्न क्षेत्रीय आयाम दिखलाई पड़ते है। धार्मिक मूर्तियां एवं मंदिरों के स्थापत्य कला को पुरातात्विक साक्ष्य के रूप पर्यटक उसे देखने आते हैं, कोई शैक्षिक तो कोई धार्मिक, कोई मनोरंजन के उद्देश्य से यहाँ पर्यटक करता हैं। क्योंकि उत्तराखण्ड में मंदिर स्थापत्य के नागर शैली की पाँच स्थापत्य उपशाखाएं पायी जाती है। जिसे हिमालय शैली भी कहा जाता है। इसी तरह से समस्त कुमाँऊ व गढ़वाल में तमाम पर्यटन के दृष्टिकोण से कला व मंदिर स्थापत्य मौजूद है।

इसी तरह सामग्रियों (अवशेषों) में हम उत्तराखण्ड के कुमाँऊ के देवीधुरा में महापाषाणीय अवशेषों का पता हेनवड[8] ने उन्नीसवीं शती ई0 में छठे दशक में शुरू होता है। यह प्रागैतिहासिक एवं आद्यैतिहासिक पुरातत्व की खोज की उपलब्धि है। इसी तरह गढ़वाल विश्वविद्यालय के पुरातत्व विभाग द्वारा 1977–81 ई0 में अलकनन्दा घाटी के प्रथम सोपान में डांग, स्वीत, श्रीनगर में सर्वेक्षण कार्य किया गया। नौटियाल तथा अन्य[9] एवं खण्डूरी[10] के अनुसार यहाँ से पूर्व पाषाण कालीन उपकरणों में स्क्रेपर, छिद्रक, लेक, छेनी इत्यादि प्राप्त हुई। जिन्हें नौटियाल[11] द्वारा इन उपकरणों को नर्मदा घाटी के डागर ग्राम के उपकरणों के समरूप बताया है। इसी तरह मठपाल[12] द्वारा कुमाँऊ में अल्मोड़ा में पश्चिमी रामगंगा घाटी उत्खनन से क्वार्टइट निर्मित चादर, क्लीवर लेक्स आदि पूर्व पाषाणकालीन प्रस्तर उपकरण की खोज की गई। पिथौरागढ़ के बनकोट से ताम्र–मानवाकृतियों की प्राप्त हुई है। जोशी[13,14] के अनुसार इन संस्कृति का काल ई0पू0 बीसवीं दूसरी शताब्दी तक निर्धारित किया जा सकता है। गढ़वाल में नौटियाल व अन्य[15] ने थापली तथा नौटियाल एवं खण्डूरी[16] ने पुरोला से प्राप्त मृदभाण्डों पर विभिन्न प्रकार के अलंकरणों का उल्लेख किया है। उत्तराखण्ड से प्राप्त चित्रित धूसर संस्कृति व महाष्म शवागार संस्कृति के अवशेष इस धारणा खण्डन करते है कि यह क्षेत्र आद्यैतिहासिक काल के उत्थान व विकास से अछूता रहा।

गढ़वाल हिमालय के थत्यूड़, अठूर, पुरोला से कुणिंद शासकों के सिक्के नौटियाल एण्ड खण्डूरी17 द्वारा प्रकाश में लाये गये। यहाँ से प्राप्त कुणिंद कालीन राजा अमोघभूति की ताम्र मुदाओं पर वेदिकावृक्ष, त्रिरत्न, बारहसिंहा, स्वास्तिक आदि चिह्नों का अंकन मिला है।

जोशी18 के अनुसार कुमाँऊ में कुणिन्द की प्राप्ति से पता चलता है कि यहाँ कुणिन्दों का शासन रहा है।

इन सबके बाद उत्तराखण्ड पर्यटन के लिए उत्तराखण्ड में समस्त संग्रहालयों का योगदान पुरातत्व की दृष्टिकाण से है। जिसके माध्यम से संग्रहालयों में संरक्षित है। पर्यटकों के जिज्ञासाओं को शान्त करने एवं उनके पर्यटन का एक वृहत दृष्टिकोण है। समस्त उत्तराखण्ड में में गौरवमयी पुरातात्विक सांस्कृतिक धरोहरों को सुरक्षित व संरक्षित रखने हेतु सन् 1980 ई0 में गढ़वाल विश्वविद्यालय संग्रहालय श्रीनगर गढ़वाल, 1982 ई0 में गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय संग्रहालय हरिद्वार, 1979 ई0 राजकीय संग्रहालय अल्मोड़ा, 1983 ई0 में लोक संस्कृति संग्रहालय, भीमताल 1987 ई0 कुमाँऊ विश्वविद्यालय संग्रहालय, नैनीताल की स्थापना की गई। इन संग्रहालयों में संरक्षित पुरावशेष सुदूर क्षेत्रों के लोक जीवन से सम्बन्धित कलावस्तुओं तथा प्रतिमाओं द्वारा देश के कला कौशल, सामाजिक दशा व ऐतिहासिक काल का परिचय मिलता है। राकेश तिवारी[19] द्वारा सर्वेक्षण रिपोर्ट के माध्यम से विभिन्न प्रस्तर प्रतिमाओं की तत्कालीन सांस्कृतिक स्वरूप को स्पष्ट करने में विशेष भूमिका रही है तो पर्यटन के लिए पुरातत्व का योगदान भी है।

निष्कर्ष :–

उत्तराखण्ड पर्यटन के लिए पुरातत्व का योगदान सभी तरह से है। मनुष्य अपने–अपने अलग–अलग दृष्टिकोणों की वजह से पर्यटन पर आता है किन्तुम उसको पुरातत्व के योगदान का सहारा हर वक्त उत्तराखण्ड में पड़ता है। चाहे वह धार्मिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक सामाजिक या सांस्कृतिक या शैक्षिक या मनोरंजन हेतु पर्यटन करें। मानव मन की प्रमुख विशेषता है कि वह अमूर्त वस्तुओं से उतना प्रभावित नहीं होता जितना स्थायी व स्पष्ट प्रभाव वाली मूर्त वस्तुओं द्वारा। अतः अभिलेख का कोई कोई भी स्वरूप हो, जैसे शिलालेख, स्तम्भलेख, भित्तिलेख, प्रतिमालेख, गुहालेख इत्यादि। उससे उस समय की लेखन कला और भाषा, व्याकरण इत्यादि का पता चलता है। कला में चित्रकला, भित्तिलेख, शैलचित्र, गुहाचित्र इत्यादि से उस समाज की कलाकारी एवं रंगरोगन का ज्ञान प्राप्त होता है। स्मारकों के स्वरूप यथा – मंदिर, इमारतें, मूर्तियों, महले, किले, खण्डहर इत्यादि से उस समाज की स्थापत्ययी विशेषता और सजावट, नक्काशी इत्यादि तथा मंदिरों के स्थापत्य से उस समय की स्थापत्य का तरीका और प्रकार एवं धार्मिक आस्था का पता चलता है एवं साथ में स्मारकों के अध्ययन से तकनीकी एवं अभियांत्रिकी पक्ष का बखूबी ज्ञान होता है।

मुद्राओं के अध्ययन से हमें उस तत्कालीन समाज की उस आर्थिक दशा का पता चलता है जो मुद्राओं के धातुओं से पता चलता है एवं धातुओं के वजन, जो मुद्रा की मात्रा को निर्धारित करता है। उससे उस राजवंश एवं समाज के विकास का पता चलता है तथा बाकी अवशेष सामग्रियों जैसे मूहरें, भाण्ड, उपकरण सभागार इत्यादि पुरातात्विक साक्ष्यों से हमें कुछ ना कुछ महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। कभी वैज्ञानिक विधि का उपयोग करके और कभी तुलनात्मक विधि का उपयोग करके। जिससे एक नया इतिहास के निर्माण में लाभदायक होता है। इस तरह से उत्तराखण्ड के पर्यटन के लिये पुरातत्व का योगदान अद्वितीय है। उत्तराखण्ड पर्यटन में मनुष्य किसी भी दृष्टिकोण को लेकर आये यहाँ सब कुछ उपलब्ध है, जो एक पर्यटक को अपनी ओर आकर्षित कर सके तो वह सिर्फ धार्मिक आस्था के लिए ही नहीं अपितु 'एक पंथ दो काज' चरितार्थ करते हुए विभिन्न दृष्टिकोणों को लेकर उत्तराखण्ड पर्यटन हेतु पुरातात्विक पर्यटन के लिए भी आते हैं। इसलिए उत्तराखण्ड के पर्यटन के लिए पुरातत्व को योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण है। सरकार तरफ से पुरातत्व संस्थानों को पर्याप्त मदद की जाय तो अभी भी बहुत सी पुरातात्विक साक्ष्य गर्भ में छिपे हुए है। जिन्हें शोध कार्य के माध्यम से ज्ञान के प्रकाश में लाया जा सकता है तो यह भारतीय संस्कृति सभ्यता संस्कृति की दिशा में एक उल्लेखनीय कार्य होगा एवं एक नये सिरे इतिहास का निर्माण करने को अग्रसर होगा तथा पर्यटन के लिए एक नये आयाम उपलबध करवायेगा। इसलिए हम उत्तराखण्ड के पर्यटन में पुरातत्व योगदान के सदैव ऋणी रहेंगे और आभारी रहेंगे।

सन्दर्भ सूची

जोशी, एम.पी. 1974, "न्यूली डिस्कवर्ड रॉक पेंटिग्स फ्रॉम कुमाँऊ हिल्स",इन गोपी मोहन भट्टाचार्य प्रकाशन ऑफ पेपर्स, ऑल इण्डिया ऑरियण्टल कॉन्फ्रेंस, 888, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, पृ.सं. 219–220।

अग्रवाल, जोशी, 1978, रॉक पेंटिग्स इन कुमाँऊ, मैन एण्ड इनवायरमेंट, खण्ड–2 अहमदाबाद, पृ0–79।

मठपाल, वाई, 1980, नवभारत टाइम्स (हिन्दी दैनिक) दिल्ली, 26 जनवरी, पृ0 3।

सकलानी, अतुल, 1984, "गोरख्या उड्यार (ग्राम डुंगरी चमोली) के शैलचित्र", पहाड़–1, पृ0 217–218।

भट्ट, आर0सी0, 1988, "जनपद चमोली का पुरातात्विक अध्ययन" अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, प्रबन्ध, हे0न0ब0ग0 विश्वविद्यालय श्रीनगर गढ़वाल।

भट्ट, आर0सी0, 1996–97, "डुंगी का शैलाश्रय" प्राग्धारा–07, उ0प्र0रा0पु0 शोध पत्रिका, पृ0 29–31।

भट्ट, आर0सी0 एवं खण्डूरी, बी0एम0, 1997, "डुंगरी रॉक पेंटिग्स साइट इन गढ़वाल हिमालय" इन खण्डूरी बी0एम0 एण्ड वी0 नौटियाल (सम्पादकीय), हिमकान्ति बुक इण्डिया, नयी दिल्ली, पृ0 50–52।

हेनवुड, डब्ल्यू0जे0, 1956, "नोटिस ऑफ द रॉक बेसन एट देवीधुरा नियर अल्मोड़ा इन अपर इण्डिया" एडिनवर्ग न्यू फिलॉसफिकल जनरल, पृ0 204–206।

नौटियाल, के0पी0 व अन्य, 1981, "इनक्वेस्ट ऑफ लिथिक इंडस्ट्री इन गढ़वाल हिमालय रिजल्ट ऑफ फर्स्ट फेस सर्वे, जनरल ऑफ हिमालयन स्टडीज एण्ड रीजनल डेवलपमेंट", पृ0सं0–62–67।

खण्डूरी, बी0एम0, 1994, "आर्कियोलॉजी ऑफ अलकनन्दा वैली (सेन्ट्रल हिमालय) बुक इण्डिया, नई दिल्ली।

नौटियाल, के0पी0, 1982, गढ़वाल महाभारत का रंगमंच, धर्मयुग (साप्ताहिक), 21 मार्च, 1982, पृ0 35, जोशार्ड, खण्ड–4, 1980, पृ0 61–67।

मठपाल, वाई0 1986, "उत्खनन के इंतजार में रामगंगा घाटी" पहाड़–2, पृ0 20–22।

जोशी, एम0पी0 1991, कॉपर वर्किंग एनसिएंट उत्तरांचल, यू0जी0सी0 नेशनल सेमीनार ऑन सांइस इन एनसिएंट इण्डिया, कुमाँऊ यूनिवर्सिटी, नैनीताल।

जोशी, एम0पी0, 1997, द टम्टाज, (कापर स्मिथ्स ऑफ सेन्ट्रल हिमालय, ए डोमोक्रोनिकल स्टडी) इन के0सी0 मोहन्ता (सम्पादक) द यूल ऑफ सेन्ट्रल हिमालय।

नौटियाल, के0पी0 व अन्य, 1987, पेन्टेड ग्रेवेयर कल्चर इन गढ़वाल हिमालय न्यू एविडेंस एण्ड इटरप्रेटेशन, पुरातत्व–17, पृ0 11–14।

नौटियाल, के0पी0 व खण्डूरी बी0एम0, 1989 पुरोला की इष्टिका वेदिका, उत्तराखण्ड–3, पृ0 26–27।

नौटियाल, के0पी0 व खण्डूरी बी0एम0, 1991, कुणिदाज क्वाइन फ्रॉम अठूर, टिहरी गढ़वाल, सेन्ट्रल हिमालय, जे0एम0एस0आई0 खण्ड–53, पृ0 52–58।